E-CONTENT

कार्ल मार्क्स का ऐतिहासिक भौतिकवाद

प्रो.(डॉ.)सुरेन्द्र कुमार
विभागाध्यक्ष-इतिहास विभाग,
पटना विश्वविद्यालय, पटना-800005
Mobile No. 9835463960
E-mail ID: kumarsurendra850@gmail.com

ऐतिहासिक भौतिकवाद

मार्क्स ने अपने सिद्धान्त 'द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद' (Dialectical Materialism) का प्रयोग ऐतिहासिक व सामाजिक विकास की व्याख्या करने के लिए किया। उसने बताया कि मानव-इतिहास में होने वाले विभिन्न परिवर्तनों और घटनाओं के पीछे आर्थिक शक्तियों का हाथ होता है। इसलिए उसने अपने 'द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद' के सिद्धान्त के आधार पर इतिहास की व्याख्या को ऐतिहासिक भौतिकवाद या 'इतिहास की भौतिकवादी' व्याख्या (Materialistic Interpretation of History) का नाम दिया, आगे चलकर अनेक विद्वानों ने इस सिद्धान्त को 'इतिहास की आर्थिक व्याख्या' (Economic Interpretation of History), 'आर्थिक नियतिवाद' (Economic Determinism) आदि नामों से भी पुकारा गया। इस प्रकार मार्क्स का यह सिद्धान्त भ्रमजाल में फंस गया। मार्क्स के अनुसार ऐतिहासिक विकास का निर्णायक तत्व उत्पादन शक्तियां हैं। उसके आर्थिक नियतिवाद के अनुसार मनुष्य जो कुछ भी करता है, उसका निर्णय आर्थिक या भौतिक कार्यों द्वारा होता है। मनुष्य आर्थिक शक्तियों का दास है। इस सिद्धान्त के अनुसार मार्क्स ने यह बताया है कि 'इतिहास का निर्धारण अन्तिम रूप में आर्थिक परिस्थितियों के अनुसार होता है।'' इस प्रकार मार्क्स के सिद्धान्त का नाम इतिहास की आर्थिक व्याख्या होना चाहिए। लेकिन मार्क्स ने 'भौतिकवाद' शब्द का प्रयोग हीगल के आशीर्वाद से अपने सिद्धान्त को अलग व उलटा रखने के लिए इसका नाम ऐतिहासिक भौतिकवाद ही रखा।

सिद्धान्त की व्याख्या

मार्क्स का कहना है कि मनुष्य जाति को राजनीति, धर्म विज्ञान आदि का विकास करने से पहले खाने-पीने की, निवास की और कपड़ों की जरूरत होती है। इसलिए प्रत्येक देश की राजनीतिक संस्थाएं, उसकी सामाजिक व्याख्या, उसके व्यापार और उद्योग, कला, दर्शन, रीतियां, आचरण, परम्पराएं, नियम, धर्म तथा नैतिकता जीवन की भौतिक आवश्यकताओं द्वारा प्रभावित रूप धारण करती हैं। एंजिल्स के अनुसार ''एक निश्चित समय में एक निश्चित जाति में जीवन-निर्वाह के तात्कालिक भौतिक साधनों का उत्पादन एवं आर्थिक विकास की मात्रा एक ऐसी नींव होती है जिस पर उस जाति की राज्य विषयक संस्थाएं, कानूनी विचार, कला एवं धार्मिक विचार आधारित होते हैं।'' मार्क्स ने आगे कहा है कि इतिहास

की सामाजिक और राजनीतिक क्रान्तियां जीवन की भौतिक अवस्थाओं के कारण होती हैं, सत्य तथा न्याय के अमूर्त विचारों या भगवान की इच्छा के कारण नहीं। जीवन की भौतिक अवस्थाओं से उसका तात्पर्य वातावरण, उत्पादन, वितरण और विनिमय से है, और उनमें भी उत्पादन सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। मार्क्स ने अपने इस सिद्धान्त को भूत और भविष्य दोनों में क्रान्तियों के लिए किया है। भूतकाल की क्रान्ति सामंतवादियों के खिलाफ बुर्जुआवादियों की थी और भविष्य की क्रान्ति बुर्जुआवादियों (पूंजीपतियों) के विरूद्ध सर्वहारा वर्ग (मजदूर वर्ग) की होगी।

मार्क्स के ऐतिहासिक भौतिकवाद की व्याख्या इन शीर्षकों के अन्तर्गत की जा सकती है:-

1. **भोजन की आवश्यकता** –इस सिद्धान्तका मौलिक तत्व यह है कि मनुष्य के जीवन के लिए भोजन पहली आवश्यकता है। उसका जीवित रहना इस बात पर निर्भर करता है कि वह अपने लिए प्राकृतिक साधनों से कितना भोजन प्राप्त करता है। अत: मनुष्य के समस्त क्रिया-कलापों का आधार उत्पादन प्रणाली है और इसी से समाज की रचना होती है।
2. **उत्पादन की शक्तियां –** मार्क्स कहता है कि उत्पादन की समस्त शक्तियों में प्राकृतिक साधन, मशीन, यन्त्र, उत्पादन, कला तथा मनुष्यों के मानसिक और नैतिक गुण शामिल हैं। ये शक्तियां समस्त मानव और सामाजिक इतिहास की निर्धारक हैं। किसी युग की कानूनी और राजनीतिक संस्थाएं सांस्कृतिक उत्पादन के साधनों की उपज है। धार्मिक विश्वासों और दर्शन का आधार भी उत्पादन की शक्तियां ही हैं। एंजिल्स ने कहा है-"इतिहास के प्रत्येक काल में आर्थिक उत्पादन और विनिमय की पद्धति तद्जनित सामाजिक संगठन का वह आधार बनाते हैं जिसके ऊपर उसका निर्माण होता है और केवल जिसके द्वारा ही उनके राजनीतिक और बौद्धिक जीवन की व्याख्या की जा सकती है।'' इस तरह कहा जा सकता है कि उत्पादन और वितरण की प्रणाली में परिवर्तन होने पर उसके अनुरूप ही सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक संस्थाओं में भी परिवर्तन आते हैं। उत्पादन की शक्तियां ही सामाजिक और राजनीतिक ढांचे का आधार है। इस ढांचे से मनुष्यों के पारस्परिक सम्बन्ध निर्धारित होते हैं और यही 'उत्पादन के सम्बन्ध' भी कहलाते हैं। अत: उत्पादन की शक्तियां ही समस्त मानवीय संस्थाओं की रूपरेखा का आधार है। मनुष्यों के समस्त क्रिया-कलाप इसी की परिधि में आते हैं।
3. **परिवर्तनशील उत्पादन-शक्तियों का सामाजिक सम्बन्धों पर प्रभाव –** मार्क्स का कहना है कि ''जीवन के भौतिक साधनों की उत्पादन पद्धति सामाजिक, राजनीतिक तथा बौद्धिक जीवन की समस्त क्रियाओं को निर्धारित करती है।'' उत्पादन की शक्तियां सदैव समान न रहकर परिवर्तित होती रहती है और साथ में सामाजिक सम्बन्धों को भी परिवर्तित करती है। यही कारण है कि औद्योगिक क्रान्ति से पहले हस्तचलित यन्त्रों के युग में समाज का स्वरूप सामंतवादी था और औद्योगिक क्रान्ति के बाद वाष्पचलित तथा अन्य ऊर्जाचालित यन्त्रों के प्रयोग के युग में अर्थात मशीनी युग में औद्योगिक पूंजीवादी समाज की स्थापना हुई है। मार्क्स का विश्वास है कि यह

विकास (उत्पादन शक्तियों का विकास) समानान्तर चलता है और यदि यह विकास (उत्पादन शक्तियों का विकास) समानान्तर चलता है और यदि कृत्रिम उपायों से इसके रास्ते में रूकावट डालने का कोई प्रयास किया जाता है तो स्वाभाविक रूप से संकट का जन्म होता है। समाजवादी व्यवस्था ऐसे सभी दोषों से मुक्त रहती है। अत: यह बात सही है कि परिवर्तनशील उत्पादन शक्तियां ही सामाजिक सम्बन्धों का नए सिरे से निर्धारण करती हैं।

4. **उत्पादन एवं उत्पादन शक्ति के विकास की द्वन्द्ववाद से प्राप्ति –** मार्क्स का कहना है कि उत्पादन की शक्तियों में तब तक परिवर्तन चलता रहता है जब तक की उत्पादन की सर्वश्रेष्ठ अवस्था नहीं आ जाती। इसी के आधार पर मार्क्स ने पूंजीवाद को समाजवाद की दिशा में ले जाने का प्रयास किया है। इस तरह पुरानी व्यवस्था नष्ट हो जाती है और नवीन व्यवस्था का जन्म होता है। उत्पादन शक्तियों का पूर्णता: की तरफ विकसित व परिवर्तित होते रहना ही सामाजिक परिवर्तन व विकास का आधार है।
5. **आर्थिक व्यवस्था और धर्म –** मार्क्स ने धर्म की आलोचना की है। वह इसका पूर्ण रूप से विरोध करते हुए कहता है कि **''धर्म दोषपूर्ण आर्थिक व्यवस्था का परिणाम है और यह अफीम के नशे की तरह है।'' यह पूंजीपतियों द्वारा मजदूर वर्ग को अनेक दु:खों से दूर रखने या दु:ख भूलाने का साधन है। धर्म का डर दिखाकर पूंजीपति वर्ग मजदूर वर्ग को स्वर्गलोक की कल्पना कराता है। इससे वे यह अनुभव करते हैं कि एक दिन वे अभावों तथा चिंताओं से मुक्त होकर सुखी जीवन का उपभोग अवश्य करेंगे।**
6. **इतिहास की अनिवार्यता में विश्वास –** मार्क्स इतिहास की अनिवार्यता में विश्वास करते हुए कहता है कि ''उत्पादन की शक्तियों के अनुकूल जिस प्रकार के उत्पादन सम्बन्धों की आवश्यकता होगी, वे अवश्य की अवतरित होंगे। मनुष्य केवल उनके आने में देरी कर सकता है या उन्हें शीघ्रता से ला सकता है, स्थायी रूप से रोक नहीं सकता।'' इस तरह मार्क्स परिवर्तनों को अवश्यम्भावी मानता है और मनुष्य के नियन्त्रण से बाहर की बात स्वीकार करता है।
7. **इतिहास का काल विभाजन –** मार्क्स ने उत्पादन के सम्बन्धों या आर्थिक दशाओं के आधार पर इतिहास को इन युगों में बांटा है-
    1. **आदिम साम्यवाद का युग अथवा प्राचीन साम्यवा**द – यह युग इतिहास का प्रारम्भिक काल है। इस युग में मानव की आवश्यकताएं अत्यन्त सीमित थी। वह फल-फूल खाकर अपनी भूख मिटा लेता था। इस युग में कोई वर्ग संघर्ष नहीं था। इस युग में व्यक्तिगत सम्पति का अभाव था। उत्पादन के साधनों पर किसी एक व्यक्ति का अधिकार नहीं था। समाज शोषक और शोषित वर्गों में नहीं बंटा हुआ था। संयुक्त श्रम के कारण उत्पादन की शक्तियों पर सबका अधिकार था। सभी कार्य व्यक्ति द्वारा सामूहिक रूप से किए जाते थे।

सभी व्यक्ति सहयोग व समानता के सिद्धान्त का पालन करते थे। इस युग में कोई विषमता नहीं थी। लेकिन यह व्यवस्था अधिक दिन तक नहीं चली।

2. **दासत्व युग अथवा समाज –** व्यक्तिगत सम्पत्ति के उदय ने आदिम साम्यवाद को समाप्त कर दिया और उत्पादन के साधनों पर व्यक्तिगत स्वामित्वहोने के कारण दास-युग का प्रारम्भ हुआ। अब व्यक्ति के शिकार के स्थान पर खेती करने लगा और पशु पालने लग गया। इस युग में शक्तिशाली व्यक्ति उत्पादन के साधनों पर अधिकार जताने लगे और कमजोर व्यक्ति उनके अधीन हो गए। इससे समाज में स्वामी और दास दो वर्ग बन गए। उत्पादन के साधनों पर जिसका कब्ज़ा होता था वह स्वामी तथा उत्पादन के साधनों से वंचित व्यक्ति दास बन गए। स्वामी दासों के श्रम का इच्छानुसार प्रयोग करने लग गए। स्वामी बड़ी कठोरता व निर्दयता से दासों का शोषण करने लग गए। दासों पर स्वामियों का पूरा अधिकार होता था। जैसे-जैसे स्वामियों के पास आर्थिक शक्ति बढ़ गई वैसे ही दास प्रथा भी कुरुप होती गई, दासों के अधिक शोषण से दासों में विद्रोह की भावना का जन्म हुआ और विद्रोह को कुचलने के लिए उत्पीड़न के नए साधन राज्य का जन्म हुआ। राज्य ने शोषक वर्ग के ही हितों को सुरक्षित बनाया। इस युग में वर्ग-संघर्ष का जन्म हुआ, अपनी चरम सीमा पर पहुंचकर दास-प्रणाली अपने अन्तर्विरोधों के कारण नष्ट होने लगी और उसके स्थान पर सामंतवादी प्रणाली का जन्म हुआ।
3. **सामन्तवादी युग अथवा समाज –** दास-युग की समाप्ति के बाद मानव समाज ने सामन्तवादी युग में प्रवेश किया। इस युग में आजीविका का प्रमुख साधन कृषि था। इस युग में समस्त भूमि राजा के अधीन थी। राजा ने भूमि को अपने सामन्तों में बांटा हुआ थे। ये सामंत आवश्यकता पड़ने पर राजा की हर तरह से मदद करते थे। ये सामंत कुलीन व्यक्ति थे। इन्होंने भूमि को छोटे-छोटे किसानों में बांट रखा था। किसानों पर सामन्तों का नियंत्रण था। किसान सामंतों को ही अपने स्वामी मानते थें इस युग में उत्पादन के साधनों पर सामंतों तथा शासक वर्ग का अधिकार था। इस युग में छोटे-छोटे उद्योगों का जन्म भी हो चुका था। कानून और धर्म सामन्तों तथा शासक वर्ग के हितों के ही पोषक थे। इस युग में किसानों का अत्यधिक शोषण होता था और उनक दशा दासों की तरह थी।
4. **पूंजीवादी युग अथवा समाज –** मध्य युग की समाप्ति पर सामन्त युग की उत्पादक शक्तियों तथा उत्पादन-सम्बन्धों के विरूद्ध आवाज उठानी शुरू कर दी। नगरों में व्यापारी वर्ग ने नए-नए आविष्कारों का लाभ उठाकर उत्पादन प्रणाली में आश्चर्यजनक परिवर्तन किए और उद्योगों का तेजी से विकास होने लगा। कोयले और भांप की शक्ति के आविष्कार ने औद्योगिक क्रान्ति को जन्म दिया। अब कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था का स्थान उद्योगों ने लेना शुरू कर दिया। अब पूंजीपतियों ने अपने उत्पादन को बढ़ाने के लिए श्रमिकों का

सहारा लेना शुरू किया और उन्हें कम वेतन देकर उनका शोषण करना शुरू कर दिया। इस तरह औद्योगिक क्रान्ति के परिणामस्वरूप समाज दो वर्गों पूंजीपति तथा श्रमिक वर्ग में बंट गया। सामाजिक सम्बन्धों में आए नवीन परिवर्तनों से वर्ग-संघर्ष उग्र होने लग गया। ऐसा संघष आज भी विद्यमान है। पूंजीपतियों द्वारा श्रमिक वर्ग का शोषण कोई नई बात नहीं है। उनका शोषण लम्बे समय से होता आ रहा है। आज भी श्रमिक वर्ग पूंजीपति वर्ग के शोषण का शिकार है।

5. **समाजवादी युग अथवा समाज –** श्रमिकों का अत्यधिक शोषण श्रमिकों को संगठित होने के लिए बाध्य करता है और विद्यमान व्यवस्था के खिलाफ क्रान्ति करने के लिए प्रेरित करता है। रूस की 1917 की क्रान्ति द्वार जार की तानाशाही का अन्त करना तथा सर्वहारा वर्ग की तानाशाही स्थापित होना इसका प्रमुख उदाहरण है। पूंजीपति वर्ग द्वारा दिए गए कष्टों से छुटकारा पाने के लिए क्रान्ति के सिवाय अन्य कोई उपाय श्रमिकों के पास नहीं है। यद्यपि यह क्रान्ति चीन और रूस में ही आई है। विश्व के अनेक पूंजीवादी देश आज भी बेहिचक श्रमिकों का शोषण कर रहे हैं। मार्क्स का विश्वास था कि पूंजीवाद में ही अनेक विनाश के बीज निहित हैं। इसका विनाश अवश्यम्भावी है। इसके अन्त पर ही नए समाज व सामाजिक सम्बन्धों की स्थापना होगी जो अगले चरण में पूर्ण साम्यवाद का रूप ले लेगा।
6. **साम्यवादी युग अथवा समाज –** सर्वहारा वर्ग की क्रान्ति के बाद उत्पादन के साधनों पर सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व स्थापित होगा और संक्रमणशील अवस्था से गुजरने के बाद समाजवादी व्यवस्था पूर्ण साम्यवाद का स्थान ले लेगी। इसे राज्यविहीन समाज की स्थिति प्रकट होगी। समाज में पूर्ण समानता और साम्य का साम्राज्य स्थापित होगा। पूंजीपति वर्ग बिल्कुल लुप्त हो जाएगा और समाज में श्रमजीवियों का वर्ग ही शेष बचेगा। विरोधी वर्ग के अभाव में वर्ग संघर्ष भी समाप्त हो जाएगा। शोषण के सभी साधन भी लुप्त हो जाएंगे। इससे आदर्श समाज की अवस्था आएगी। मार्क्स ने इस व्यवस्था की दो विशेषताएं बताई हैं-
    1. यह अवस्था वर्ग-विहीन होगी। इसमें शोषक व शोषित दो वर्ग न होकर उत्पादन के साधनों का स्वामी बहुसंख्यक वर्ग श्रमिक वर्ग या सर्वहारा वर्ग होगा। राजनीतिक शक्ति के प्रयोग की आवश्यकता न रहने पर राज्य नाम की सस्थाका स्वयं लोप हो जाएगा। क्योंकि राज्य पूंजीपति वर्ग के शोषण का प्रभावशाली साधन होता है। श्रमिक वर्ग को इसकी कोई आवश्यकता नहीं रहेगी।

2. इस अवस्था में 'सामाजिक संसाधनों के वितरण का सिद्धान्त' लागू होगा अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति अपनी योग्यता के अनुसार कार्य करेगा और उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति स्वयं हो जाएगी।

8. **मानव-इतिहास की कुंजी वर्ग-संघर्ष है –** मार्क्स का मानना है कि मानव समाज का इतिहास वर्ग संघर्ष का इतिहास है। प्रत्येक युग में परस्पर विरोधी दो वर्ग रहे हैं। दास-युग में स्वामी और दास, सामन्तवादी युग में किसान और सामंत तथा पूंजीपति वर्ग (बुजुर्आ वर्ग) तथा श्रमिक वर्ग (सर्वहारा वर्ग) का अस्तित्व रहा है। इन दोनों वर्गों के हित अलग-अलग होने के कारण वर्ग-संघर्ष (Class–Struggle) का जन्म होता है। यही वर्ग संघर्ष समाज में परिवर्तन तथा विकास का प्रेरक तत्व है। मार्क्स का मानना है कि इसी वर्ग-संघर्ष के कारण अन्ततः समाजवाद की स्थापना होगी और सामाजिक सम्बन्धों का निर्धारण नए सिरे से होगी। उस अवस्था में समाज शोषण मुक्त होगा उसमें समानता तथा साम्यवाद का सिद्धान्त पूर्ण रूप से अपना कार्य करेगा।

मार्क्स के ऐतिहासिक भौतिकवादी सिद्धान्त के निहितार्थ

1. किसी समाज के विकास की प्रक्रिया में आर्थिक तत्वों की भूमिका सबसे अधिक महत्वपूर्ण होती है।
2. इतिहास का अध्ययन मानव-समाज के विकास के नियम जानने के लिए किया जाता है।
3. प्रकृति के विकास के नियमों की तरह समाज के विकास के भी कुछ वैज्ञानिक नियम हैं।
4. उत्पादक-शक्तियों में परिवर्तन से उत्पादकीय सम्बन्धों में भी परिवर्तन हो जाता है।
5. प्रत्येक युग की सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था पर आधिपत्य उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व वाले वर्ग का ही होता है।
6. सामाजिक जीवन के परितर्वन आर्थिक शक्तियों के कारण होते हैं। इनके पीछे किसी ईश्वरीय इच्छा या संयोग का कोई हाथ नहीं होता है।
7. वर्ग-संघर्ष सामाजिक विकास की कुंजी है और दास-युग से लेकर सर्वहारा वर्ग के अधिनायकवाद तक वर्ग-संघर्ष ने ही सामाजिक व्यवस्थाओं में परिवर्तन किए हैं। लेकिन साम्यवादी युग की स्थापना पर इस वर्ग-संघर्ष की प्रक्रिया का अन्त हो जाएगा। इतिहास की आर्थिक व्याख्या के माध्यम से मार्क्स पूंजीवाद के अन्त तथा साम्यवाद के आगमन की अनिवार्यता व्यक्त करता है।

ऐतिहासिक भौतिकवाद की आलोचना

मार्क्स के ऐतिहासिक भौतिकवाद का सिद्धान्त अनेक आलोचनाओं का शिकार हुआ है। इसकी आलोचना के आधार हैं:-

1. **मानव इतिहास के विकास में केवल आर्थिक तत्व ही निर्धारक नहीं –** मार्क्स ने आर्थिक तत्वों को मानव समाज का निर्धारक मानने की भारी भूल की है। मानव इतिहास के विकास में धर्म,

दर्शन, राजनीति, नैतिकता आदि का महत्वपूर्ण योगदान होता है। इसके अतिरिक्त जलवायु, न्याय की इच्छा, विवेक, लाभ तथा मानव की महतवकांक्षाएं, भावनाएं, अभिलाक्षाएं भी मानवीय क्रियाओं में प्रभावी रही है। जातीय पक्षपात, षड्यंत्र, अन्धविश्वास, लैंगिक इच्छा, लैंगिक आकर्षण, अधिकार, नाम तथा प्रसिद्धि की लिप्साओं पर मार्क्स का सिद्धान्त प्रकाश नहीं डालता। संसार में संघर्षों का कारण आर्थिक तत्व ही नहीं रहे हैं। इनके पीछे और आर्थिक तत्वों ईष्र्या, प्रदर्शन की इच्छा, शक्ति और सत्ता का प्रेम आदि का भी महत्वपूर्ण योगदान होता है।

2. **राजनीतिक सत्ता का एकमात्र आधार आर्थिक सत्ता नहीं है –** मार्क्स का मानना है कि समाज में जिस वर्ग का उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व होता है, समाज की सत्ता पर भी उसका ही अधिकार होता है। पूंजीवादी अवस्था में तो यह ठीक है लेकिन हर अवस्था में संभव नहीं हो सकता। प्राचीन भारत में ब्राह्मणों और क्षत्रियों के पास राजनीतिक सत्ता अत्यधिक थी, फिर भी वे आर्थिक सत्ता से अभावग्रस्त थे। मध्ययुग में पोप की शक्ति का आधार आर्थिक स्वामित्व पर निर्भर नहीं था। वर्तमान युग में कर्मचारी वर्ग का महत्व आर्थिक सत्ता के कारण न होकर उनकी मानसिक शक्ति के कारण है। अत: सदैव आर्थिक सत्ता ही राजनीतिक सत्ता का आधार नहीं होती।
3. **दैवीय व संयोग तत्वों की उपेक्षा –** मार्क्स ने अपने इस सिद्धांत में संयोग तत्व की घोर उपेक्षा की है। न्यूटन ने संयोगवश ही सेब को पेड़ से गिरते देखकर गुरुत्वाकर्षण का नियम प्रतिपादित किया था। एक दु:खी व्यक्ति को देखकर ही महात्मा बुद्ध का सारा जीवन दर्शन ही बदल गया। नेपोलियन कभी भी ख्याति प्राप्त नहीं कर सकता था यदि जिनोआ ने 1768 में कोर्सिका को फ्रांस को न सौंपा होता। नेपोलियन फ्रांस के स्थान पर इटली का नागरिक होता। 1917 में यदि जर्मनी की सरकार लेनिन को वापिस रूस लौटने की आज्ञा नहीं देती तो बोल्शेविक क्रांति नहीं होती। वर्तमान समय की संसदात्मक प्रणाली आकस्मिक घटनाओं का परिणाम है। इस प्रकार मानव इतिहास में परिवर्तन व विकास आकस्मिक कारणों से होते हैं, आर्थिक कारणों से नहीं।
4. **आर्थिक तत्व ही संघर्ष का एकमात्र कारण नहीं है –** मार्क्स का कहना है कि आज तक का इतिहास उत्पादन शक्तियों में होने वाले संघर्ष का परिणाम है। लेकिन सत्य तो यह है कि युद्ध केवल आर्थिक कारणों से ही नहीं हुए हैं। महाभारत का युद्ध, रावण पर राम का आक्रमण, आर्थिक प्रेरणाओं से युक्त नहीं थे। इनके पीछे मनोवैज्ञानिक तत्वों-ईष्र्या, द्वेष, बदला, पाप का नाश करने व धर्म की रक्षा करने की भावना आदि बलशाली थी। सिकन्दर द्वारा भारत पर आक्रमण के पीछे उसकी विश्व विजय की महत्वाकांक्षा थी। दो महाशक्तियों में लम्बे समय तक चलने वाला शीतयुद्ध (Cold–war) विचारधाराओं का संघर्ष था, ब्रटेंड रसल ने कहा है-''हमारे राजनीतिक जीवन की बड़ी-बड़ी घटनाओं का निर्धारण भौतिक अवस्थाओं और मानवीय भावनाओं की पारस्परिक क्रियाओं

के द्वारा होता है।'' अत: संघर्षों के पीछे आर्थिक तत्वों के साथ गैर-आर्थिक तत्वों का भी महत्वपूर्ण योगदान होता है।

5. **उत्पादन प्रणाली ही विचार को जन्म नहीं देती, विचार भी उत्पादन प्रणाली को जन्म देते हैं –** मार्क्स के इन सिद्धान्त के अनुसार उत्पादन प्रणाली ही विचार की जन्मदाता है। जबकि सत्य तो यह है कि विचार भी उत्पादन प्रणाली को जन्म देते हैं। उदाहरणत: सोवियत प्रणाली, जो 1917 की क्रान्ति के बाद स्थापित की गई, साम्यवादी सिद्धान्त की उपज है। फासिस्ट प्राणी फासिस्ट सिद्धान्त जो इटली में मुसोलिनी ने पेश किया था, की उपज है। नाजीवादी प्रणाली जर्मनी में हिटलर के नाजीवाद की देन है। अत: विचार भी उत्पादन प्रणाली की जननी होते हैं।
6. **मानवीय इतिहास के कालक्रम का निर्धारण संभव नहीं है –** मार्क्स ने अपनी आर्थिक व्याख्या के अन्तर्गत इतिहास का काल विभाजन-दास युग, सामन्तवादी युग, पूंजीवादी युग, सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व और साम्यवादी युग में किया है। उसका यह काल विभााजन गलत है। यह आवश्यक नहीं है कि सर्वहारा वर्ग का अधिनायक पूंजीवाद के पूर्ण विकास के बाद ही आए। रूस में 1917 की क्रान्ति से पहले वहां पूंजीवाद न होकर कृषि प्रधान राज्य था। इसी तरह चीन सर्वहारा क्रान्ति से पूर्व कोई औद्योगिक दृष्टि से विकसित राष्ट्र नहीं था। अत: मार्क्स का काल विभाजन तार्किक दृष्टि से गलत है।
7. **राज्य-विहीन समाज का विचार गलत है –** मार्क्स का यह सोचना गलत है कि इतिहास का विकास क्रम राज्यविहीन समाज पर आकर रूक जाएगा। क्या साम्यवादी युग में पदार्थ का अन्तर्निहित गुण 'गतिशीलता' समाप्त हो जाएगा। यदि गतिशीलता का पदार्थ का स्वाभाविक गुण है तो उसमें साम्यवादी अवस्था में भी अवश्य ही परिवर्तन होगा। उत्पादन के साधन बदलेंगे, सामाजिक सम्बन्धों में परिवर्तन आएगा तथा वर्गविहीन समाज का प्रतिवाद उत्पन्न होकर साम्यवाद को भी नष्ट कर देगा। अत: मार्क्स का 'गतिशीलता का सिद्धान्त' साम्यवाद के ऊपर आकर रूक जाएगा, तर्कसंगत व वैज्ञानिक नहीं हो सकता।
8. **सार्वभौमिकता का अभाव –** एक दार्शनिकतावादी सिद्धान्त के रूप में इतिहास की आर्थिक व्याख्या सारे संसार पर व हर क्षेत्र में लागू नहीं हो सकती। लॉस्की के अनुसार-''आर्थिक पृष्ठभूमि पर सारा वर्णन करने का आग्रह मूलत: मिथ्या है।'' उसने कहा है कि बाल्कान राष्ट्रवाद का केवल मात्र आर्थिक पृष्ठभूमि के आधार पर वर्णन नहीं किया जा सकता। इसके अतिरिक्त मानव जीवन के समस्त पहलूओं को आर्थिक तत्व द्वारा प्रभावित मानना सर्वथा गलत है। आर्थिक तत्व मानवीय मामलों को प्रभावित तो कर सकता है, लेकिन उनका निर्धारण नहीं।
9. **अवैज्ञानिकता –** मार्क्स ने इस सिद्धान्त को गम्भीर अनुशीलन व वैज्ञानिक अध्ययन करके नहीं निकाला है। उसने हीगल को द्वन्द्वात्मक प्रक्रिया के आधार पर ही इसकी कल्पना की है। उसने पूंजीवाद के नाश के उद्देश्य से इस सिद्धान्त के वैज्ञानिक नियमों की ओर ध्यान नहीं दिया है।

उसने दृष्टांत तो बहुत दिए हैं, लेकिन वैज्ञानिक प्रमाणों का इस सिद्धान्त में सर्वथा अभाव है। स्वयं ऐंजिल्स भी मार्क्स की अवैज्ञानिकता को स्वीकार करता है। उतावलेपन के कारण मार्क्स ने इस सिद्धान्त को भ्रमपूर्ण बना दिया है। मार्क्स स्वयं पदार्थ में गतिशीलता की बात करता है और स्वयं ही साम्यवादी व्यवस्था में वर्ग-संघर्ष की समाप्ति की बात करके गतिशीलता के सिद्धान्त का विरोधी बन जाता है। अत: अन्तर्विरोधों से ग्रस्त होने के कारण यह सिद्धान्त भ्रांतिपूर्ण है।

यद्यपि मार्क्स के इस सिद्धान्त की काफी आलोचना हुई है। आलोचना के कुछ ठोस आधार भी हैं। लेकिन इस सिद्धान्त की पूर्ण उपेक्षा करना मार्क्स की महत्वपूर्ण देन की उपेक्षा करना है। जोड ने कहा है कि इस सिद्धान्त ने मार्क्स को अन्य किसी भी सिद्धान्त से अधिक प्रसिद्धि प्रदान की है। मार्क्स ने सर्वप्रथम इतिहास के क्रमबद्ध एवं वैज्ञानिक अध्ययन की परम्परा की नींव रखी है। चाहे हम मार्क्स द्वारा प्रस्तुत की गई इतिहास की व्याख्या से सहमत न हों, लेकिन यह बात तो सत्य है कि इतिहास किसी दैवीय इच्छा की अभिव्यक्ति नहीं है। आज यह स्वीकार किया जाता है कि सारे इतिहास की मुय धारा में एक क्रमबद्धता अवश्य है और इसलिए सामाजिक विकास के नियम भी अवश्य हैं, चाहे ये नियम मार्क्स के नियमों से अलग हों। मार्क्स ने लम्बे समय से चली आ रही सामाजिक जीवन के अध्ययन की धर्म- प्रधान एवं मध्ययुगीन अध्ययन प्रणाली का पूर्ण अन्त कर दिया है और समाजशास्त्रों को एक नई गति व दिशा प्रदान की है। करयू हण्ट ने कहा है-''सामजशास्त्रों के सभी आधुनिक लेखक मार्क्स के प्रति ऋणी हैं, यद्यपि वे इसे स्वीकार नहीं करते।'' इससे स्पष्ट हो जाता है कि मार्क्स ने आर्थिक कारकों पर जोर देकर सामाजिक विज्ञानों के क्षेत्र में एक नया कदम रखा है। इस बात से पूर्णतया: इन्कार नहीं किया जा सकता कि आर्थिक शक्ति राजनीतिक शक्ति की नियामक नहीं है। आर्थिक तत्व की उपेक्षा करके इतिहास का निष्पक्ष अध्ययन करना असम्भव है। अत: मार्क्स का ऐतिहासिक भौतिकवाद का सिद्धान्त उसकी एक महत्वपूर्ण देन है।

For further reading:

1. C.L.Wayper — Political Thought
2. George H. Sabine — A History of Political Theory
3. Bertrand Russel — A History of Western Philosophy
4. Lancaster — Masters of Political Thought
5. R. Vaughan — A History of Political Thought
6. Robert L. Heilbroner — The Worldly Philosophers
7. Antonio Gramsci — Selections from Prison Notebooks
8. Louis Althuser — For Marx
9. D. MacLellan — The Thought of Karl Marx
10. Karl R. Popper — The Poverty of Historicism
11. Karl R. Popper — The Open Society & Its Enemies
12. John Tosh — The Pursuit of History

13. B.K.Jha Pramukh Rajnitik Chintak Part-1&2
14. Gangadutt Tiwari Pashchatya Rajnitik Chintakon Ka Itihas Part-1&2